Satya ka
Avahan
सत्य का
आवाहन
Invoking the Divine
Year 11 Issue 1 January–February 2022
Membership Postage: Rs. 100

Sannyasa Peeth, Munger, Bihar, India

Hari Om

Satya ka Avahan is a bilingual and bi-monthly magazine compiled, composed and published by the sannyasin disciples of Sri Swami Satyananda Saraswati for the benefit of all people who seek health, happiness and enlightenment. It contains the teachings of Sri Swami Sivananda, Sri Swami Satyananda, Swami Niranjanananda and Swami Satyasangananda, along with the programs of Sannyasa Peeth.

Editor: Swami Gyansiddhi Saraswati

Assistant Editor: Swami Shivadhyanam Saraswati

Published by Sannyasa Peeth, c/o Ganga Darshan, Fort, Munger – 811201, Bihar.

Printed at Thomson Press India (Ltd), Haryana

© Sannyasa Peeth 2022

Membership is held on a yearly basis. Late subscriptions include issues from January to December. Please send your requests for application and all correspondence to:

Sannyasa Peeth
Paduka Darshan
PO Ganga Darshan
Fort, Munger, 811201
Bihar, India

✉ A self-addressed, stamped envelope must be sent along with enquiries to ensure a response to your request.

Front cover and plates: Parivrajan of Sri Swami Satyananda Saraswati, 1988–1989

SATYAM SPEAKS – सत्यम् वाणी

Never shall I forsake myself or the timeless lessons I have taught myself, nor shall I let the value of divine inspiration and being be lost. My rainbow-covered bubble shall carry me further than beyond the horizon's settings, forever to serve, to love, and to live as a sannyasin.

—Swami Satyananda Saraswati

मैं न तो स्वयं का, न ही उन कालजयी शिक्षाओं का परित्याग करूँगा जिन्हें मैंने आत्मसात् किया है। न ही मैं दिव्य प्रेरणा की अमूल्य निधि को कभी खोऊँगा। मेरा इन्द्रधनुषी मण्डल मुझे क्षितिज के पार ले जाएगा, जहाँ मैं सदैव एक संन्यासी के रूप में सेवा, प्रेम और दान का जीवन बिताऊँगा।

—स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

Published and printed by Swami Kaivalyananda Saraswati on behalf of Sannyasa Peeth, Paduka Darshan, PO Ganga Darshan, Fort, Munger – 811201, Bihar.
Printed at Thomson Press India (Ltd), 18/35 Milestone, Delhi Mathura Rd., Faridabad, Haryana.
Owned by Sannyasa Peeth **Editor**: Swami Gyansiddhi Saraswati

Satya ka
Avahan
सत्य का आवाहन
Invoking the Divine
Year 11 Issue 1 • January–February 2022

न तु अहं कामये राज्यं न स्वर्गं नापुनर्भवम्। कामये दुःखतप्तानां प्राणिनां आर्त्तिनाशनम्॥

"I do not desire a kingdom or heaven or even liberation. My only desire is to alleviate the misery and affliction of others."

—Rantideva

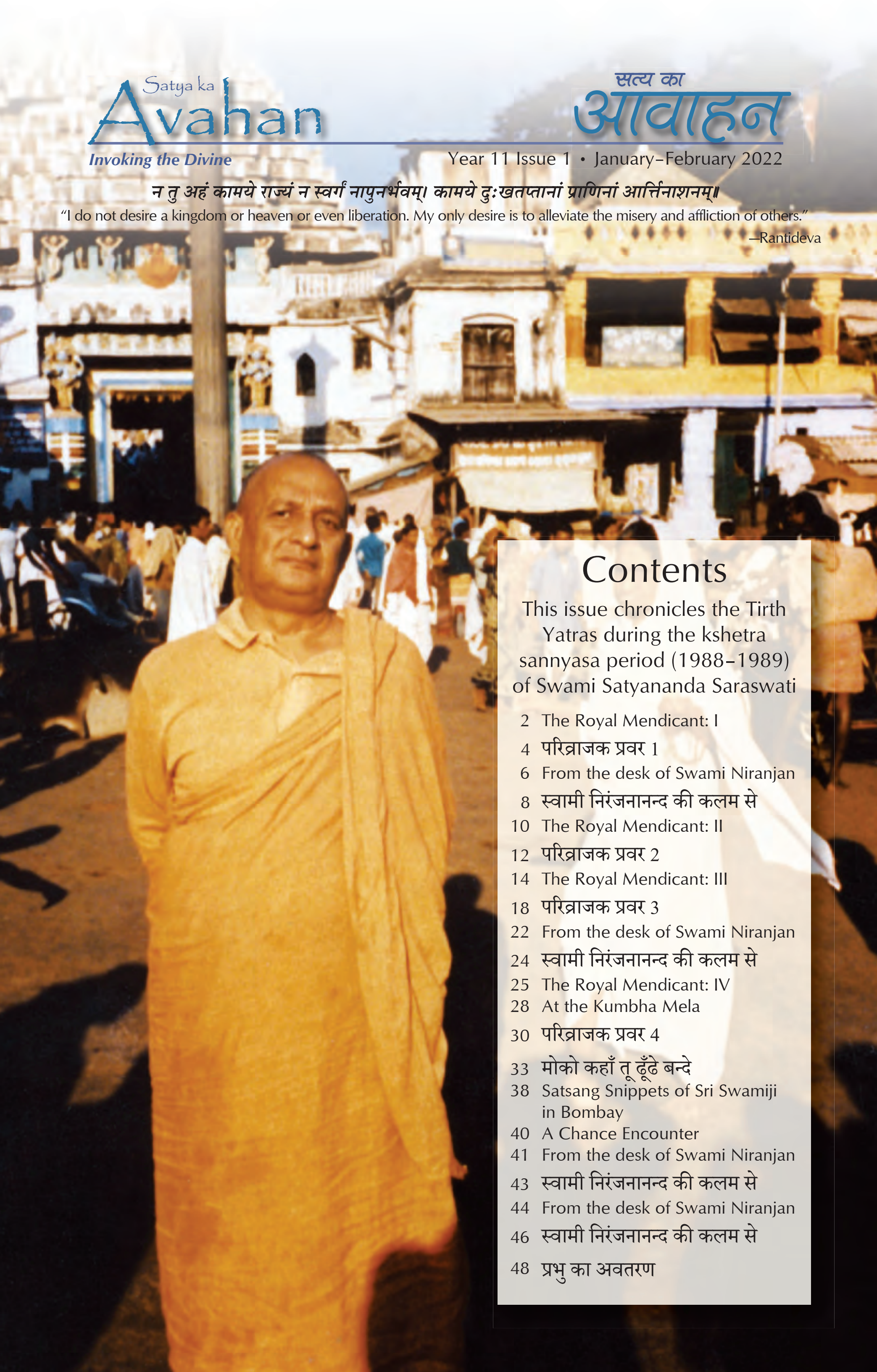

Contents

This issue chronicles the Tirth Yatras during the kshetra sannyasa period (1988–1989) of Swami Satyananda Saraswati

2 The Royal Mendicant: I
4 परिव्राजक प्रवर 1
6 From the desk of Swami Niranjan
8 स्वामी निरंजनानन्द की कलम से
10 The Royal Mendicant: II
12 परिव्राजक प्रवर 2
14 The Royal Mendicant: III
18 परिव्राजक प्रवर 3
22 From the desk of Swami Niranjan
24 स्वामी निरंजनानन्द की कलम से
25 The Royal Mendicant: IV
28 At the Kumbha Mela
30 परिव्राजक प्रवर 4
33 मोको कहाँ तू ढूँढे बन्दे
38 Satsang Snippets of Sri Swamiji in Bombay
40 A Chance Encounter
41 From the desk of Swami Niranjan
43 स्वामी निरंजनानन्द की कलम से
44 From the desk of Swami Niranjan
46 स्वामी निरंजनानन्द की कलम से
48 प्रभु का अवतरण

The Royal Mendicant: I

Swami Satyananda Saraswati

3 October 1988

Lord Vishwanath of Kashi gave me his blessings.
Vindhyavasini promised me.
Sankat Mochan, yes, I filed an application there.
Not for myself and certainly not for BSY,
but for someone, somewhere, in troubled waters.
Sangam was refreshing.
Pashupatinath had an air of control and discipline.
Vaishnava Devi stirred me.
When I took a dip at Brahma Kund at Haridwar,
My whole body felt the sweetness of that
drop of nectar which the Puranas speak of.
Yamanu Devi at Yamunotri did speak to me.
Ganga, at Gangotri inspired a dream.
Perhaps an impossible dream, but if she wishes,
there is nothing which I consider impossible.
Kedarnath, O Lord! where I lost myself,
The time, the direction and all that is empirical.
I am afraid to have that experience again.
Badri Vishal, a pleasant culmination of all
the beautiful experiences of life.
And finally Sivanandashram,
words fail to describe the experience.
I did not feel the absence of Swamiji and certainly I told him that
the ashram was a powerhouse of spiritual life.
With this I have completed the first part of my mendicancy.

परिव्राजक प्रवर 1

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

3 अक्टूबर 1988

काशी विश्वनाथ ने मुझे आशीर्वाद दिया।
विन्ध्यवासिनी ने मुझे वचन दिया।
और, संकट मोचन से मैंने प्रार्थना की,
अपने लिए नहीं और न ही बिहार योग विद्यालय के लिए,
परन्तु किसी के लिए, कहीं पर,
जो जीवन के झंझावातों में उलझा हुआ है।
संगम ने मुझे नयी शक्ति दी।
पशुपतिनाथ की हवा में नियंत्रण और अनुशासन था।
वैष्णो देवी ने अनुप्राणित किया,
और जब मैंने हरिद्वार के ब्रह्म-कुण्ड में स्नान किया तो सारे शरीर ने
पुराणों में वर्णित अमृत की मिठास का अनुभव किया।
यमुनोत्री में यमुना देवी ने मुझसे वार्तालाप किया।
गंगोत्री में गंगा ने एक कार्य के लिए प्रेरित किया।
संभवत: एक असंभव कार्य,
परन्तु यदि वह चाहें तो कुछ भी असंभव नहीं।
केदारनाथ, ओह! जहाँ मैं समय, दिशा,
वह सब कुछ जो अनुभवगम्य है,
और अपने आपको भी भूल गया।
बद्री-विशाल, जीवन की सारी सुखद अनुभूतियों का चरम बिन्दु।
और अंत में अवर्णनीय शिवानन्दाश्रम।
क्या पुन: मैं अतीत में जी रहा था?
स्वामीजी की अनुपस्थिति मुझे अनुभव नहीं हुई
और उनसे कहा –
आश्रम आध्यात्मिक जीवन का पावर हाउस है।
इसी के साथ मैंने अपने परिव्रजन का प्रथम चरण पूरा किया।

From the desk of Swami Niranjan

October 1988

Many of you may already know that Sri Swamiji left the Munger ashram on 8th August for a pilgrimage of the siddha teerthas in India. He left the ashram as a parivrajak carrying with him only Rs.108/– which was given to him by BSY as a mark of respect and devotion, as he firmly declined any further assistance.

In the tradition of sannyasa, we have read that detachment and vairagya are the true characteristics of a sannyasin, and as Swami Sivanandaji said, it is this spirit of sannyasa we find resplendent in Swamiji. I recently had the honour of having Swamiji's darshan at Deoghar where he had come for the darshan of Vaidyanath jyotirlingam after travelling to Kashi Vishwanath, Vindhyavasini, Dwarkadheesh, Vaishnava Devi, Gangotri, Yamunotri, Kedarnath, Badrinath, Haridwar and Sivanandashram at Rishikesh.

During the meeting I requested him to come to Ganga Darshan for some time, but he firmly stated that he has no obligation or attachment with the gurudom of Bihar School of Yoga. The first phase of his mission, he said, culminated with the foundation of Ganga Darshan, and the next phase begins with his parivrajak life. Whenever he visits BSY, it will be in the capacity of a sadhaka. In Swamiji's own words:

With nothing on my body,
And with nothing in my hands.
Let me roam on the banks of the Ganga,
With the name of Shiva on my lips
And the thoughts of Devi and Durga in my mind.
Let me not even know that I exist:
And when I die, I will not know that I am dying. ■

स्वामी निरंजनानन्द की कलम से

अक्टूबर 1988

कई लोग जानते ही होंगे कि श्री स्वामीजी ने भारत के सिद्ध तीर्थों की यात्रा के लिए 8 अगस्त को मुंगेर आश्रम से प्रस्थान किया। वे आश्रम से एक परिव्राजक के रूप में निकले और उन्होंने स्पष्ट रूप से किसी भी प्रकार की सहायता स्वीकार करने से मना कर दिया। विशेष अनुरोध पर मात्र 108 रुपये ही स्वीकार किये जो उन्हें बिहार योग विद्यालय की ओर से श्रद्धा और सम्मान सहित दिये गये थे।

संन्यास परम्परा में हमलोगों ने पढ़ा है कि अनासक्ति और वैराग्य ही एक संन्यासी के सच्चे लक्षण हैं, और जैसा स्वामी शिवानन्द जी ने कहा भी था, संन्यास का यही भाव स्वामीजी में पूर्णतया प्रकाशित है। मुझे हाल में देवघर में श्री स्वामीजी के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ जहाँ वे काशी विश्वनाथ, विन्ध्यवासिनी, द्वारकाधीश, वैष्णोदेवी, गंगोत्री, यमुनोत्री, केदारनाथ, बद्रीनाथ, हरिद्वार और ऋषिकेश के शिवानन्द आश्रम के दर्शन के बाद बाबा बैद्यनाथ के दर्शन के लिए आये थे।

मैंने श्री स्वामीजी से गंगादर्शन आने के लिए अनुरोध किया तो उन्होंने कहा, 'गंगादर्शन व गुरुपन से मुझे कोई आसक्ति नहीं है। मेरा परिव्राजक जीवन शुरू है। गुरु आश्रम से परिव्राजक होकर आठ वर्ष तक देश के कोने-कोने में भिक्षुक के रूप में घूमा था। अब मैं राजसी भिक्षुक होकर प्रभु के हर दरवाजे पर जाऊँगा। अगर कभी गंगादर्शन आना होगा तो एक साधक के रूप में ही आऊँगा।' श्री स्वामीजी के ही शब्दों में –

वस्त्रहीन शरीर और खाली हाथों के साथ
घूमने दो मुझे गंगा के पावन तट पर
मेरे होठों में शिव का नाम,
मेरे मन में देवी दुर्गा का ध्यान
मुझे ज्ञान भी न हो कि मैं हूँ
और जब बुलावा आए तो मुझे
ज्ञात भी न हो कि जा रहा हूँ। ■

सत

The Royal Mendicant: II

Swami Satyananda Saraswati

21 November 1988

In Vasukinath, as I lay under a shady tree,
I had a dream vision of a hooded serpent
coiled around my neck and the clear instruction,
'Become a Chakravarti'. So, I should continue
my chakram of the teerthas.
I performed the nine days of Nawaratri Anushthana
amidst the spiritual sanctity of Kamakhya.
On Dashami I worshipped the Devi incarnate Kanya
and performed the ritual of washing her feet.
The purity and innocence of the Shraddha
which came alive in me was that of a child
who calls out to his mother
and I did receive an answer through her.

In Kalighat, Calcutta, I had Darshan of Kali,
the destroyer of kala and destiny.
Jagannath Puri was full of ananda.
I simply transcended myself as I sat for hours
under the shaded groves in the temple precincts.
I cherish a longing to once again be in that courtyard
where shraddha becomes a living experience.
There I met Swamis Nityabodha, Mahatma and other Aussies.
With this, the second part of my mendicancy is over. ■

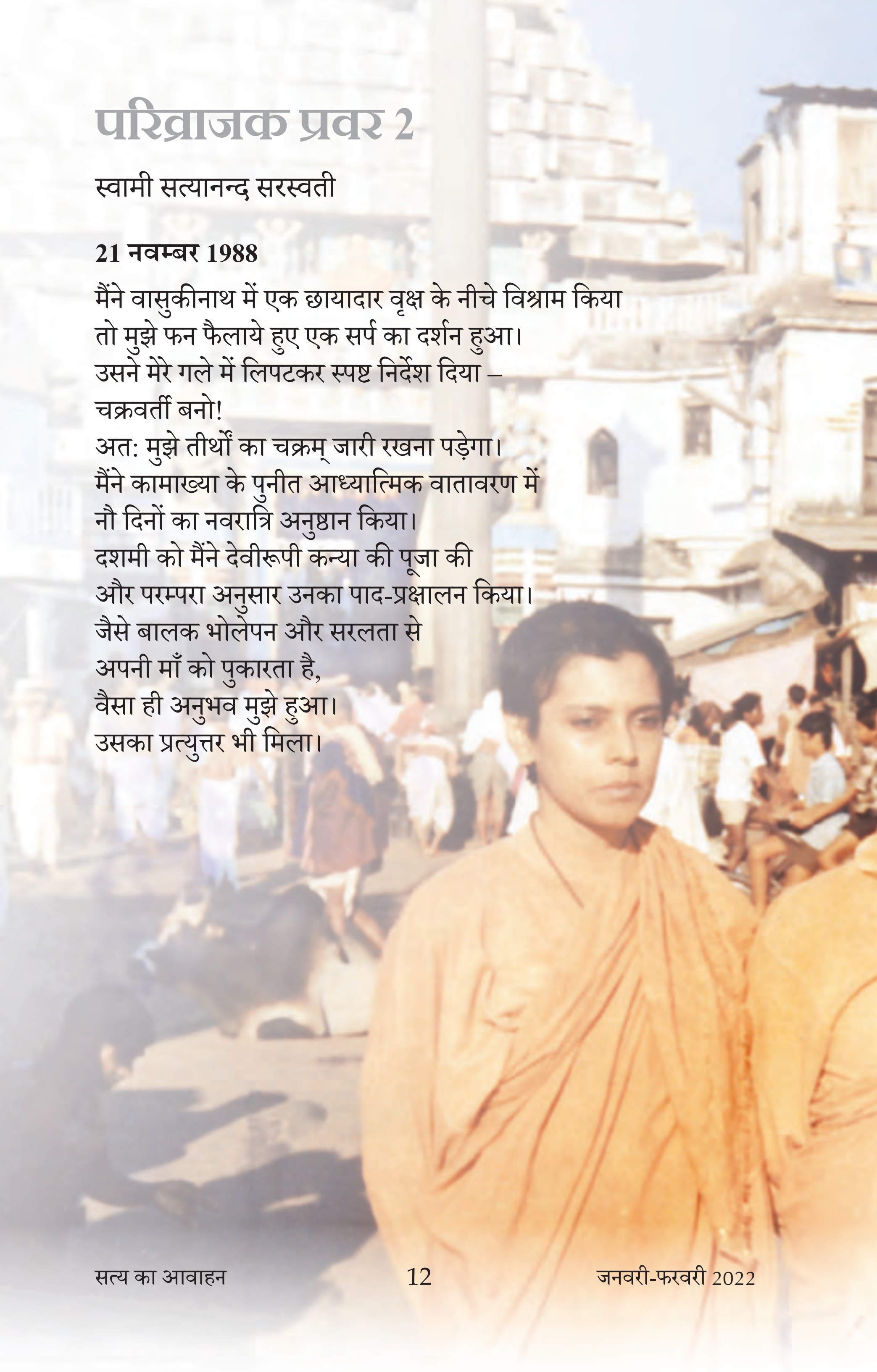

परिव्राजक प्रवर 2

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

21 नवम्बर 1988

मैंने वासुकीनाथ में एक छायादार वृक्ष के नीचे विश्राम किया
तो मुझे फन फैलाये हुए एक सर्प का दर्शन हुआ।
उसने मेरे गले में लिपटकर स्पष्ट निर्देश दिया –
चक्रवर्ती बनो!
अत: मुझे तीर्थों का चक्रम् जारी रखना पड़ेगा।
मैंने कामाख्या के पुनीत आध्यात्मिक वातावरण में
नौ दिनों का नवरात्रि अनुष्ठान किया।
दशमी को मैंने देवीरूपी कन्या की पूजा की
और परम्परा अनुसार उनका पाद-प्रक्षालन किया।
जैसे बालक भोलेपन और सरलता से
अपनी माँ को पुकारता है,
वैसा ही अनुभव मुझे हुआ।
उसका प्रत्युत्तर भी मिला।

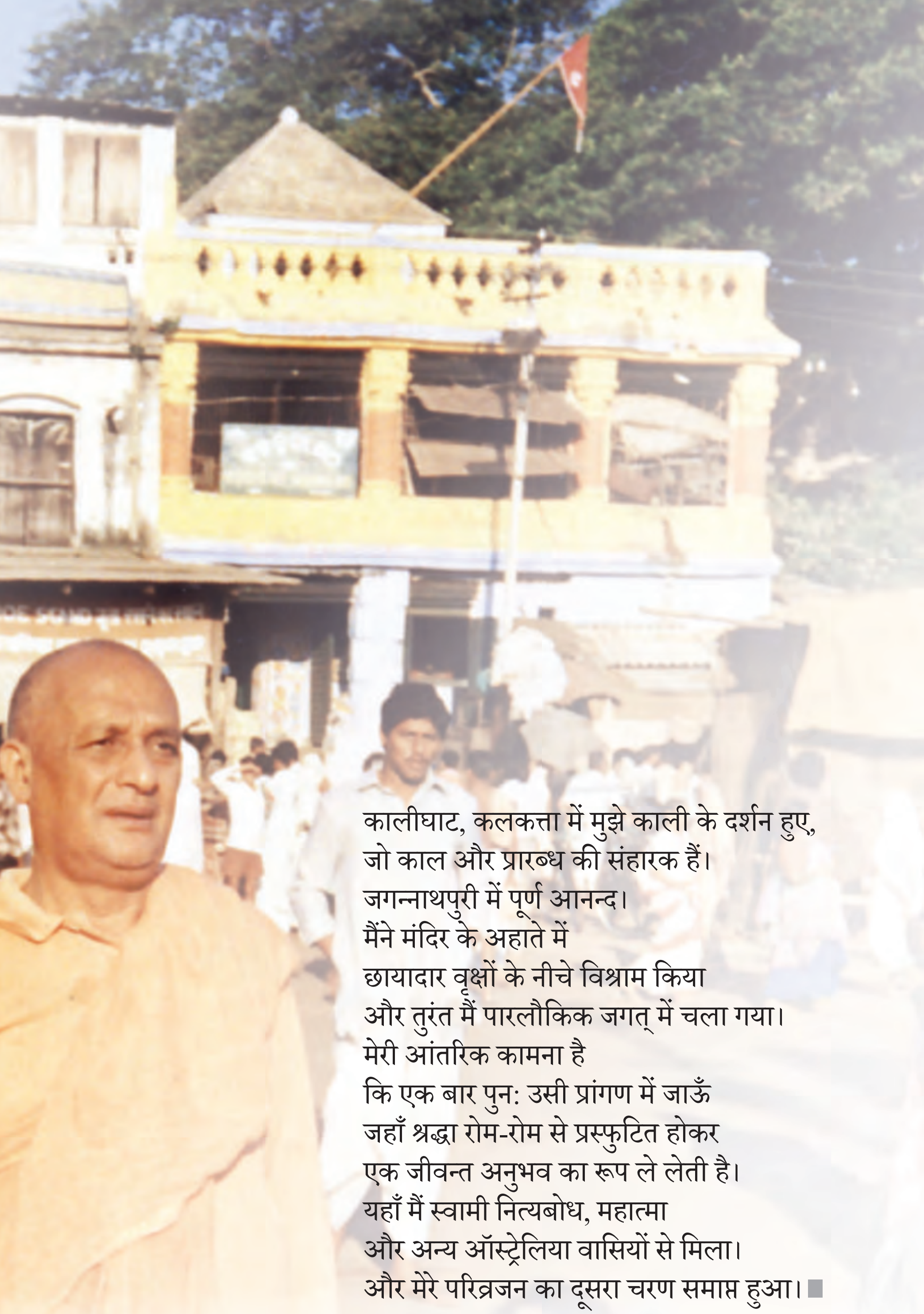

कालीघाट, कलकत्ता में मुझे काली के दर्शन हुए,
जो काल और प्रारब्ध की संहारक हैं।
जगन्नाथपुरी में पूर्ण आनन्द।
मैंने मंदिर के अहाते में
छायादार वृक्षों के नीचे विश्राम किया
और तुरंत मैं पारलौकिक जगत् में चला गया।
मेरी आंतरिक कामना है
कि एक बार पुन: उसी प्रांगण में जाऊँ
जहाँ श्रद्धा रोम-रोम से प्रस्फुटित होकर
एक जीवन्त अनुभव का रूप ले लेती है।
यहाँ मैं स्वामी नित्यबोध, महात्मा
और अन्य ऑस्ट्रेलिया वासियों से मिला।
और मेरे परिव्रजन का दूसरा चरण समाप्त हुआ। ■

The Royal Mendicant: III

Swami Satyananda Saraswati

Khajuraho 18–20 November 1988

Khajuraho, a tribute paid to Lord Shiva by the Chandela dynasty, was a haunting experience of the rites and rituals that were an inseparable part of the lives of our ancestors, the rishis and munis, who not only gave birth to our civilization, but also dedicated their lives to the exploration of energy and consciousness behind matter. The sublime depiction of that dramatic cosmic process of creation revealed life as a 'prayer'. Warriors, musicians, devas, apsaras, gandharvas, men, women and beasts came alive and spoke in unison of a time when not just eroticism, as has been overly emphasized in all depictions of the temple, but every aspect of life was considered as a means to reach God.

Chitrakoot 21 November

It was on this very spot 'at the ghat of Chitrakoot when all the saints gathered to watch Sant Tulsidas grinding chandan paste to anoint a tilak on his ishta devata, Sri Ram, that the Lord revealed himself in person'. Here amidst the sylvan selling of Kamdgiri, I delved into the time when Sri Ramji eternally sanctified this soil by taking refuge there. During a few reflective moments as I rested at the foot of the mountain where thousands do parikrama, the murmuring streams, dancing trees and flowing rivers sang to me of the glorious year when Sri Ramji with Sita and Lakshman played his leela at Chitrakoot.

Maihar 22 November

The long and steep climb up to the shrine of Sharada Devi, as I rested at intervals due to a footsore from my trek to Kedarnath, was reminiscent of the ascent of kundalini to sahasrara, resting and reposing at each chakra. Sharada Devi, the Goddess of vidya, to whom noted musicians and artists pay tribute, my salutations flow to you for awakening the creative energy.

Amarkantak 3–7 December

Amarkantak, 'the forest of the immortals', vibrant with the energy of great tapasvis, rishis and munis who have practised sadhana there from time immemorial, breathed an air of tranquillity, harmony and balance. During my dip at the Narmada source, I felt as if my body was being caressed by the breath of Shiva from whose body she has emanated.

A bath at Kapil Dhara where the icy cold Narmada falls freely, a sip of water at the source of the Sone, a walk through the deep forest to Bhrigu Kamandal and resting at Mai ki Bagiya, I felt oneness with nature.

Every night as my physical body rested at the ashram of the Udaseen Sampradaya, my astral self was out in the open, 'majestically walking with Shiva', body smeared with bhasma, snake coiled around the neck, trident and damaru in hand, stalking the wild forest.

Mahakaleshwar, Ujjain 11–14 December

The eternally sanctified city of Ujjain, which was conquered with pride by Shiva, where I performed bhasma abhisbek on Mahakaleshwar, the swayambhu jyotirlinga of Lord Shiva. The ceremony lasted one and a half hours and only a few select people were present.

The rest of the day was spent in fasting and in chanting mantras before Mahakaleshwarji. The three-foot black linga encircled by Nag Raj and set with flawless perfection on a silver yoni, thronged by hundreds of devotees, silently projecting shakti from within itself, defied all understanding and brought alive the timeless tradition of shraddha and bhakti.

Kala Bhairava, Ujjain 14 December

You have been consuming the *madira*, wine, offered to you by your ardent devotees. Now, I offer you the intoxication which has led me through several incarnations, for this is all I have. And with this humble offering I seek your protection while I tread throughout the wilderness of life.

Omkareshwar 15–16 December

This sacred Om-shaped island on the banks of Narmada Devi, where Adi Shankaracharya received sannyasa diksha from Guru Govinda Pada, and later performed the miracle of absorbing Narmada in his kamandal, transformed faith into a living experience. There in the cave where Shankaracharya lived, as I stood with folded hands, I heard a voice within say, 'What do you seek? Ask and it shall be yours.' That brought to my mind the utterances of Maitreyi and Nachiketas, and in an outburst of Sanskrit, I said, 'Digvijay – no; Immortality – not possible; Prosperity – had plenty; Moksha – it is in me, I have come here merely to fulfil my promise which I made to you thirty years ago, to return when my work is over.'

A secret passage from Shankaracharya's cave led me to the garbha griha where the jyotir linga of Omkareshwar stood in meditative silence amidst the chanting of mantras. Bells were chiming, conches were being blown and amidst all of this tumult as I laid my head at the feet of Omkareshwarji, I vividly experienced that this jyotirlinga was eternally luminescent in sahasrara.

Datia 18–19 December

The Pitambari Peeth of Shakti at whose feet saints and sages have realized the supreme – I was returning here after thirty years to find that Sri Swamiji of Pitambari Peeth had left his physical body. He was my third tantric guru with whom I lived for four days during my parivrajak life, after I had served Swami Sivananda at Rishikesh. His dedication to the propagation of tantric sadhana will forever remain enshrined in my life.

With this, I have completed the third part of my mendicancy. ■

परिव्राजक प्रवर 3

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

खजुराहो (18 से 20 नवम्बर 1988)

भगवान शिव को समर्पित चंदेल वंश की भक्ति का प्रतीक खजुराहो एक विलक्षण अनुभव था। हमारे पूर्वज ऋषि-मुनियों ने आराधना और उपासना को जीवन का एक अविभाज्य अंग मानकर उनका जीवन्त अनुभव किया। उन्होंने न केवल हमारी सभ्यता को जन्म दिया, बल्कि अपना जीवन भी इस दृश्यमान पदार्थ के पीछे निहित शक्ति और चेतना की खोज में समर्पित किया। वे अपनी महान् शिल्प कृतियों में सृष्टि की एक ऐसी छाप छोड़ गये, जिसमें जीवन को एक अविरल प्रार्थना के रूप में दर्शाया गया। योद्धा, संगीतज्ञ, देव, अप्सरायें, गंधर्व, मनुष्य, मातृ-शक्तियाँ तथा पशुओं की मूर्तियाँ जीवन्त होकर समस्वर एक ऐसे काल के बारे में बतलाती हैं जब केवल यौन-कर्म ही नहीं, बल्कि जीवन का प्रत्येक कर्म ही भगवत्-प्राप्ति का एक साधन था।

चित्रकूट (21 नवम्बर)

यही है वह स्थान जिसके बारे में लिखा गया है –

चित्रकूट के घाट पर भई संतन की भीर।
तुलसीदास चन्दन घिसे तिलक देत रघुवीर॥

कामदगिरि की छत्रछाया में मैंने उस काल में प्रवेश किया जब श्रीराम के चरणों ने इस धरती को पावन किया था। उस पहाड़ के नीचे जहाँ हजारों लोग परिक्रमा करते हैं, अपने चिन्तन में मैंने झरनों को, वृक्षों को, नदी को श्रीराम के गुणों का गान करते देखा, जहाँ उन्होंने सीता और लक्ष्मण के साथ लीला की थी।

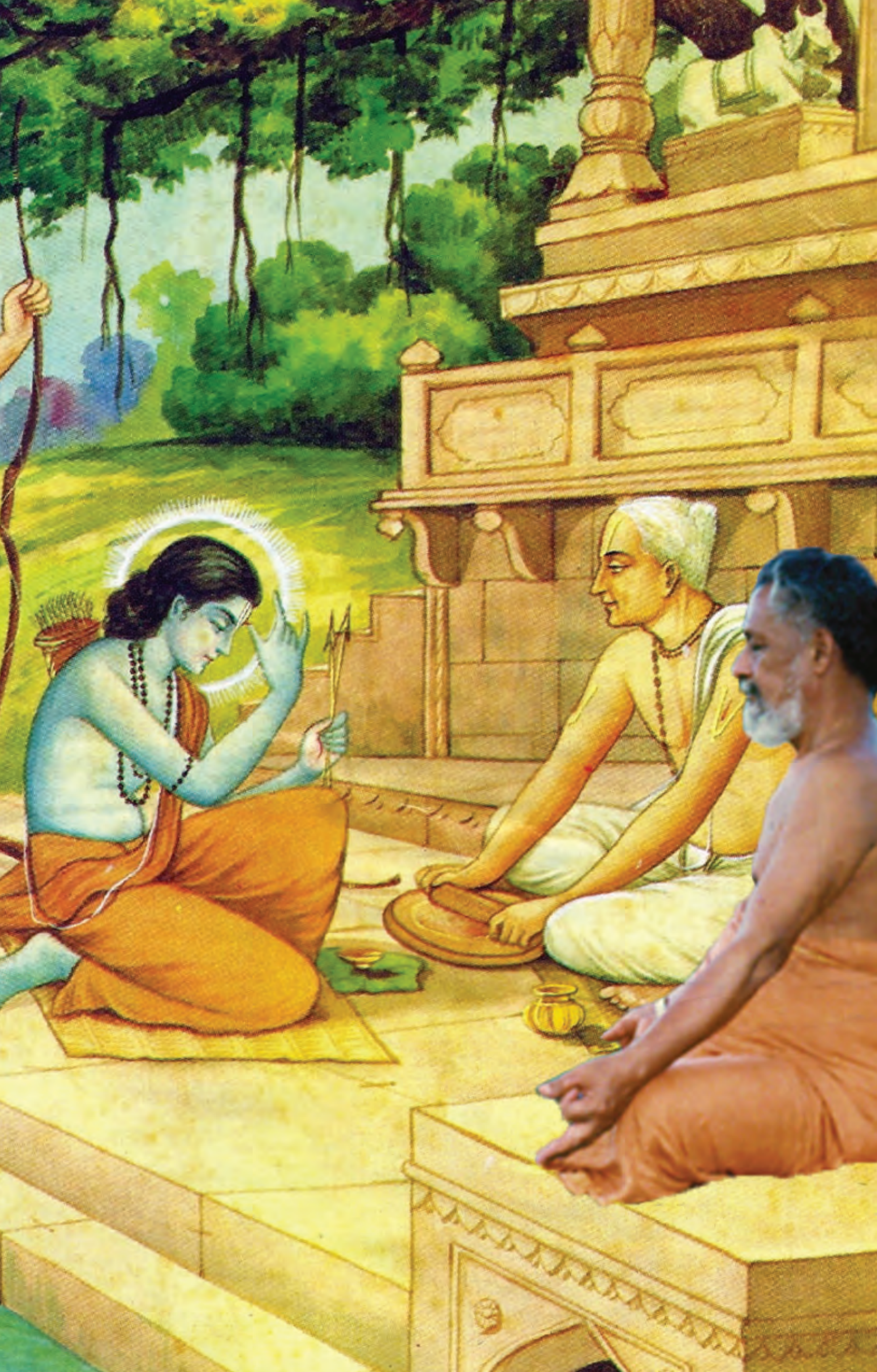

मैहर (22 नवम्बर)

शारदा देवी के मंदिर की लम्बी चढ़ाई पर अपने पैरों में घाव होने के कारण जब मैं कुछ पल विश्राम के लिये रुकता था, तब सहस्रार तक पहुँचने को आकुल हर चक्र पर ठहरती कुण्डलिनी का ख्याल आता था। विद्यादायिनी शारदा का निवास सहस्रार में है और इन्हें कलाकारों और गायकों ने अपनी कृतियाँ समर्पित की हैं, उस सृजनात्मक शक्ति को जगाने वाली महाशक्ति को मैं नमन करता हूँ।

अमरकंटक (3 से 7 दिसम्बर)

अमरकंटक दीर्घायुओं का वन है जिसमें तपस्वियों, ऋषियों व योगियों की शक्ति स्पंदित हो रही थी, जो यहाँ सनातन काल से साधनारत थे। यहाँ की वायु में शान्ति, समन्वयता और संतुलन पाया। नर्मदा में स्नान के समय भगवान शिव के श्वास-स्पर्श का अनुभव किया, जिनके शरीर से नर्मदा जन्मी थी।

कपिल धारा में स्नान करके, जहाँ बर्फीली ठण्ढी नर्मदा उन्मुक्त रूप से गिरती है, सोन के उद्गम का एक घूँट पीकर, भृगु कमण्डल की ओर घने जंगलों में चलकर तथा 'माई की बगिया' में विश्राम करके मैं प्रकृति से एकाकार हो गया।

प्रत्येक रात्रि को जब मेरा भौतिक शरीर उदासीन संप्रदाय के आश्रम में विश्राम करता था, तब सूक्ष्म शरीर दूर कहीं गौरवान्वित होकर भगवान शिव के साथ चलता रहता था। उनके शरीर पर था – भस्म का लेप, गले में कुंडलित सर्प, हाथों में त्रिशूल व डमरू तथा वे बीहड़ वनों में शान से विचरते थे।

महाकालेश्वर, उज्जैन (11 से 14 दिसम्बर)

अनन्त काल से शाश्वत पवित्र उज्जैन नगर में, जिस पर भगवान शिव ने विजय प्राप्त की थी, मैंने उनके स्वयंभू ज्योतिर्लिंग महाकालेश्वर पर भस्म-अभिषेक अनुष्ठित किया। यह अनुष्ठान डेढ़ घण्टे तक चला और उस समय वहाँ कुछ विशेष लोग ही उपस्थित थे।

शेष दिन मैंने उपवास रखा तथा महाकालेश्वर के सामने मंत्र उच्चारण करते हुए व्यतीत किया। वह तीन फुट का कृष्णवर्णी लिंगम् एक रजतवर्णी योनि पर प्रस्थापित था और उसके चारों ओर नागराज लिपटे थे। सैकड़ों भक्तों से घिरे हुए इस लिंगम् ने स्वयमेव अपने अंदर की शक्ति प्रक्षेपित करते हुए श्रद्धा और भक्ति की कालातीत परम्परा को जीवन्त रूप में सामने प्रस्तुत कर दिया।

काल भैरव, उज्जैन (14 दिसम्बर)

हे काल भैरव! आप अब तक अपने उत्कृष्ट और उत्साही भक्तों द्वारा अर्पित मदिरा सेवन करते रहे हैं। अब मैं आपको एक ऐसा नशा अर्पित करता हूँ जो मुझे जन्म-जन्मांतर से प्रेरित करता आया है। मेरे पास अर्पण करने के लिए तो यही है। इसे नम्रतापूर्वक अर्पित करते हुए यही प्रार्थना है कि जीवन की वीरान राहों पर चलते हुए सर्वदा आपका संरक्षण मुझे प्राप्त हो।

ओंकारेश्वर (15 से 16 दिसम्बर)

नर्मदा देवी के किनारे पर ॐ की आकृति के उस पावन द्वीप ओंकारेश्वर में, जहाँ आदिगुरु शंकराचार्य ने अपने गुरु गोविन्दपाद से संन्यास दीक्षा ग्रहण की थी तथा उसके बाद नर्मदा को अपने कमण्डल में समेट लेने का चमत्कार दिखाया था, मेरी श्रद्धा पुन: मानो जीवन्त अनुभव में परिणत हो गई।

अपने हाथ जोड़े मैं उस गुफा में, जहाँ शंकराचार्य रहे थे, खड़ा हुआ तो अंदर से एक आवाज आई, 'तुम्हारी क्या कामना है? जो माँगोगे वह मिलेगा।' उस समय मेरे मन में मैत्रेयी और नचिकेता के उद्गार गूँजने लगे और मैंने संस्कृत में प्रस्फुटित शब्दों में कहा, 'दिग्विजय – नहीं, अमरत्व – संभव नहीं, वैभव व समृद्धि – यथेष्ट मिले, मोक्ष – यह मेरे अंदर है। सिर्फ यहाँ अपनी वह प्रतिज्ञा पूरी करने आया हूँ, जो मैंने आपके समक्ष तीस वर्ष पहले की थी कि अपना कार्य समाप्त करके यहाँ लौट आऊँगा।' शंकराचार्य की गुफा से एक गुप्त रास्ते द्वारा मैं गर्भगृह में पहुँचा। लयात्मक रूप से बजती हुई घंटियों, शंखनाद के कोलाहल के बीच जब मैंने ओंकारेश्वर के समक्ष अपना सिर रखा तो स्पष्ट अनुभव हुआ कि यह ज्योतिर्लिंग तो सहस्रार में हमेशा प्रकाशित था।

दतिया (18 से 19 दिसम्बर)

शक्ति का यह पीताम्बरी पीठ, जिसकी छत्रछाया में साधु-संतों ने असीम का साक्षात्कार किया है। मैं इस स्थान पर तीस वर्षों के बाद लौटा था और मुझे पता चला कि पीताम्बरी पीठ के स्वामीजी अपना भौतिक शरीर त्याग चुके हैं। वे मेरे तीसरे तांत्रिक गुरु थे। ऋषिकेश में स्वामी शिवानन्द जी की सेवा के बाद अपने परिव्राजक काल में मैं उनके साथ चार दिनों तक रहा था। तांत्रिक साधना के प्रचार के प्रति उनका समर्पण मेरे जीवन में हमेशा प्रेरणा का स्रोत रहेगा। इसके साथ ही मेरे परिव्रजन का तीसरा चरण पूरा हुआ। ■

From the desk of Swami Niranjan

December 1988

People throng to religion, gurus and spiritual organizations for guidance and the achievement of their desires. In return they get self-satisfaction and many of their desires are also fulfilled. The problems of this planet may not get solved, but they get an opportunity to dip into the ocean of knowledge. They derive wisdom but it remains unexpressed in their behaviour, for the droplets of wisdom which they acquire evaporate in the hot sands of samsara.

The channelling of sublime wisdom into creative action is a rare gift which only a few extraordinary individuals possess. On an encounter with Swamiji, even a casual one, one is deeply impressed that he epitomizes such a person. Behind his personality flows a stream in which wisdom and action are the main currents. The realization of the supreme, from the *Brahma Sutras* to the selfless action of the *Gita*, is a spontaneous expression which has become one in him.

Renunciation, giving of alms, sacrifice and austerities are performed by many people, but it is rarely done with a vision of the future. Rather, we see that it is done more for self-contentment. One kind of action moves, motivates and inspires the world, another is only for self-indulgence.

We are counted in the latter category. To motivate, inspire and provide direction to the world, a leader is required who embodies anger as well as pardon and peace, brilliance and shrewdness as well as simplicity and innocence, down to earth awareness as well as far-sightedness. One in whom both the fiery brilliance of Parashuram as well as the astute and calm wisdom of Rama are manifest. One who symbolises the determination and righteous wisdom of Krishna and

Yudhishthira, the glow and harsh warmth of the sun and the silvery, soothing and healing coolness of the moon. Such a multifaceted, mysterious and practical leader can mould a definite future from the gathering of scattered, diverted and dissipated energies.

Upon meeting and seeing Swamiji, all know deep down that he is such a leader. At present he is on a pilgrimage of India and its siddha teerthas with a definite constructive purpose. He is infusing the heart and mind with a new energy, a new mantra to unite the future. Be ready to receive him. ■

स्वामी निरंजनानन्द की कलम से

दिसम्बर 1988

दौड़-दौड़कर कुछ लोग प्राप्ति और मार्गदर्शन की आशा से जाते हैं धर्मों, गुरुओं और आध्यात्मिक संस्थाओं की ओर। इससे उनकी भावनाओं की पुष्टि होती है और आत्म-संतोष प्राप्त होता है। संसार की समस्याएँ भले न सुलझें, परन्तु ज्ञान के सागर में उन्हें डुबकी लगाने का अवसर तो मिल जाता है। थोड़ा बहुत ज्ञान वे पा भी लेते हैं, लेकिन वह व्यवहार में नहीं उतर पाता। ज्ञान की चंद बून्दें जो उन्हें मिली थीं वे संसार की तपती बालू पर पड़कर जल्द ही उड़ जाती हैं।

श्री स्वामीजी से साक्षात्कार करने पर लगता है कि ये एक ऐसे व्यक्ति हैं जो कुछ करके दिखायेंगे। उनके व्यक्तित्व में एक ऐसी धारा प्रवाहित होती है जिसमें ज्ञान और कर्म का समन्वय है। ब्रह्मसूत्र का 'ब्रह्म-ज्ञान' और गीता का 'निष्काम कर्म योग', दोनों उनके जीवन में एकाकार हो गये हैं। प्रबुद्धता और कर्म कौशल, दोनों का साथ रहना अद्वितीय प्रतिभा वालों में ही संभव है।

कई लोग त्याग, तपस्या, दान और बलिदान करते हैं, किन्तु भविष्य को देखकर नहीं। प्राय: स्वान्त: सुखाय ही उसका कारण होता है। एक कार्य होता है संसार को प्रेरणा और मार्गदर्शन देने के लिए तथा दूसरा होता है आत्म-संतोष के लिए। हम सब आत्म-संतोष के लिए कर्म करने वालों में गिने जाते हैं। संसार को प्रेरणा और मार्गदर्शन देने के लिए एक ऐसे नायक की आवश्यकता होती है जिसमें क्रोध के साथ क्षमा तथा शान्ति भी हो, जिसमें परशुराम और राम दोनों मूर्तिमान हों, जिसमें कृष्ण और युधिष्ठिर की-सी निष्ठा और प्रज्ञा मूर्तिभूत हों, जिसमें सरलता के साथ कुटिलता भी हो और जो व्यावहारिक हो तथा दूरदर्शी भी। केवल सर्वतोमुखी, अनोखी और व्यावहारिक प्रतिभा वाला नायक ही बिखरी शक्तियों को बटोरकर एक निश्चित भविष्य में ढाल सकता है।

श्री स्वामीजी से साक्षात्कार करने या उनके दर्शन करने से प्रत्येक को यही आभास होता है कि वे इसी प्रकार के एक नायक हैं। अभी वे भारत के सिद्ध तीर्थों का भ्रमण कर रहे हैं। उनका भ्रमण निरुद्देश्य नहीं है। वे संसार के नागरिकों के हृदय और मन में एक नयी ऊर्जा का संचरण, एक नये मंत्र का उद्घोष कर रहे हैं। आपको इस महान् मिशन के लिए तैयार रहना है। ■

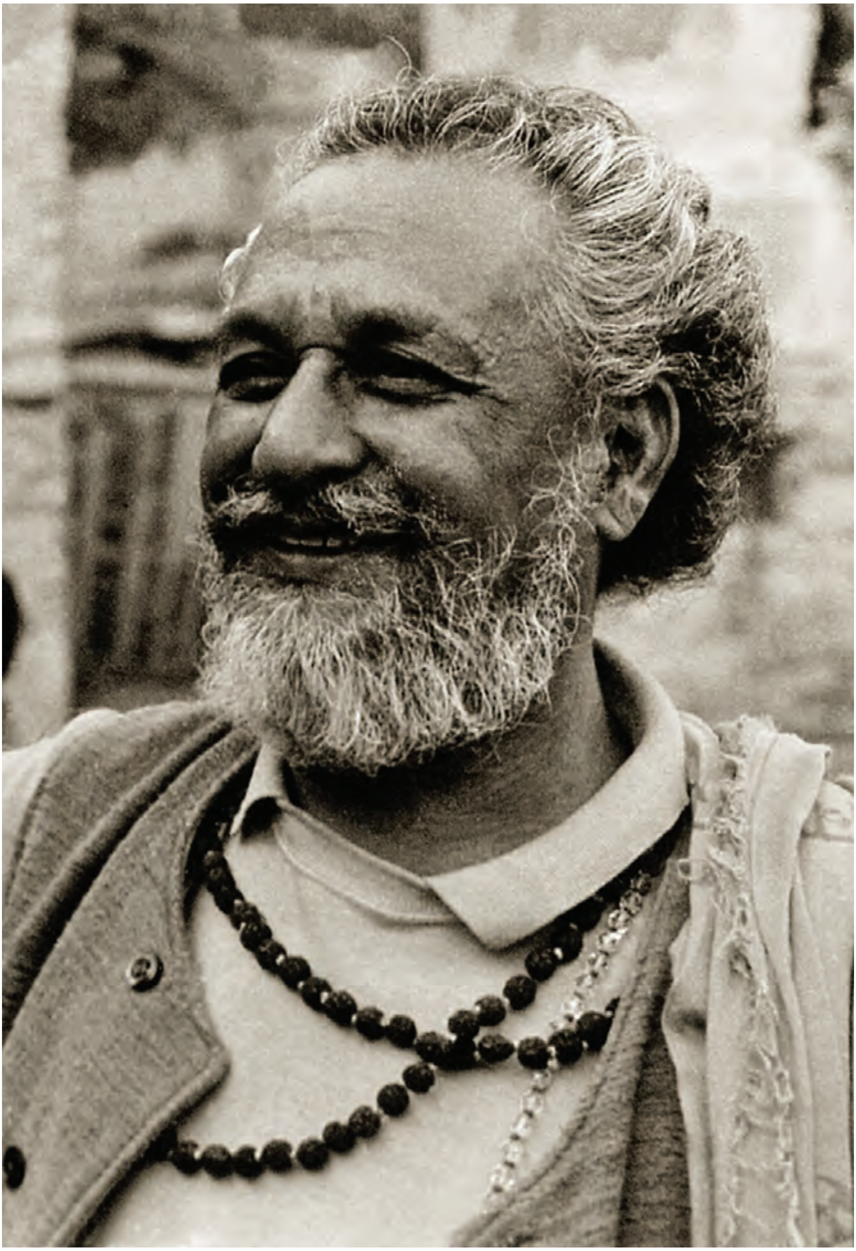

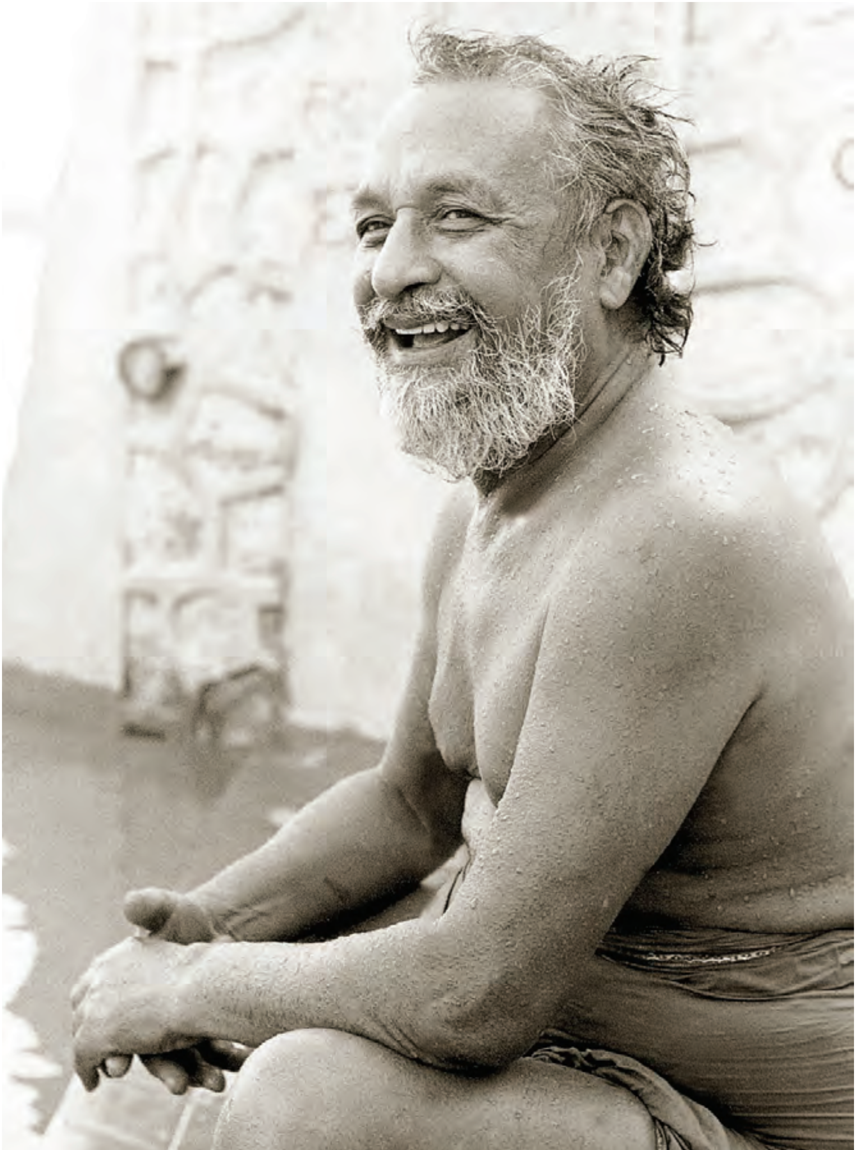

The Royal Mendicant: IV

Swami Satyananda Saraswati

Mathura, Vrindavan, Gokul, Barsana, 1–11 January 1989

1989 began with a pilgrimage to Mathura mandal or Vraj where Lord Krishna took avatar in the Dwapar Yuga, and where he enacted the entire Vraj leela. The Lord himself has stated in the *Varahi Purana* that there is no other place in all the three worlds dearer to him than Vraj or Mathura.

The crystal blue waters of Yamunaji from Yamunotri flow freely through this town, and sitting on its bank I delved deep into the nostalgic memories of the playful leela of Krishna with Radha, which has been lyricized by renowned poets time and again.

Everything in Vraj resounded with the blissful memories of Krishna consciousness whether it was a darshan of Gokul, the first home of Krishna where he acquired the name Makhan Chor; or Vrindavan where he slaughtered Kaliya and enacted his rasa leela with the gopis, and acquired the name Rasiya; or a parikrama of Govardhana Parvat where he protected his people from Indra's wrath by lifting the mountain on his finger, thus acquiring the name Giridhar; or a stroll through Barsana where his favourite gopi, Radha, lived.

I spent twelve days in the land of Krishna, at Swami Akhandanandaji's ashram, and during that time the entire *Bhagavat Katha* came alive with its stories of a legend that will forever inspire me. It was here too that I had darshan of the great saint, Devraha Baba.

Kumbha Mela, Prayag, Allahabad, 12–14 January, and 2–7 February

Prayag, the confluence of Ganga, Yamuna and Saraswati, the symbols of ida, pingala and sushumna, has been forever eulogized as the king of teerthas or *Teertharaj*. The *Padma Purana* states: Just as the Sun is supreme among the planets and the Moon is supreme among the stars, Prayag is the supreme teertha.

Poorna Kumbh Mela is held at Prayag every twelve years when the planetary positions of Brihaspati or Jupiter in Vrish Rashi and Surya or the Sun in Makar Rashi are affected. This year was especially auspicious as Somavati Amavasya took place after 172 years.

I took part in two *snan parvas* or bathing festivals, that of Makar Sankranti on January 14th, and Somavati Amavasya on February 6th. The charged waters of Sangam electrified my whole body and I could easily feel the truth of the saying that a bath here gives man rebirth in this life itself.

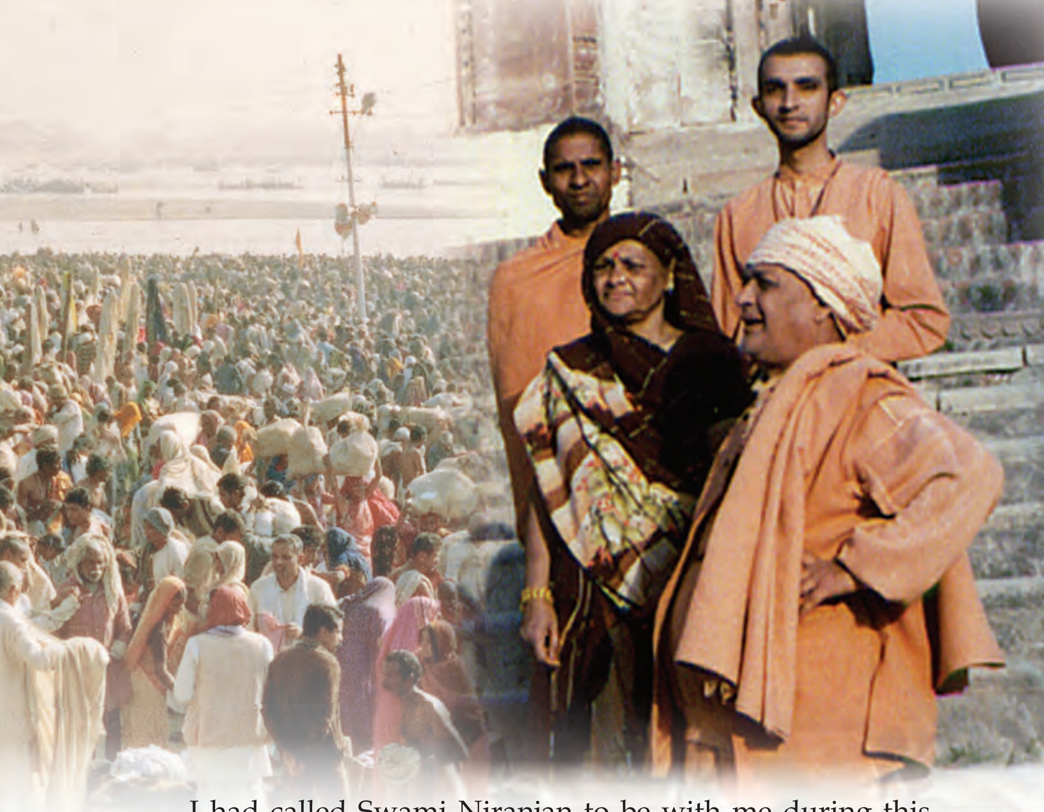

I had called Swami Niranjan to be with me during this momentous occasion and to have darshan of Ganga, Yamuna and Saraswati Devi. During the rest of the days we jostled with millions of devotees who had come there like me, and being amidst them was in itself a moving experience. Throngs of people from every culture, race and creed, with just one thought in mind – to bathe at Prayag, gave me the unique vision of witnessing faith in motion, and I could easily conceive the idea of that faith which is a dynamic principle and has been known to move mountains.

I also had the darshan of many sadhus and saints who had all gathered there, including Mahant Godavari of Juna Akhada, Devraha Baha, the Jagatguru Shankaracharyas and many other tapasvis and tyagis. For days afterwards and even now when I close my eyes, I can re-enact that vision of the crowds milling through the sandy bed of Ganga and all the devas, gandharvas and apsaras gathered in the sky to witness this great spectacle. ■

At the Kumbha Mela

Swami Anandananda Saraswati, Italy

I was in Italy when I came to know about Sri Swamiji's leaving Ganga Darshan in August 1988. For me, it was just a matter of knowing where he was. When he was in Munger, my mind knew, 'that is where he is'. In December 1988, I came to India and people were saying that the ashram was closed. When I came, it was open, everything was just normal. Through Swami Niranjan I learnt that Sri Swamiji had left for a new phase of his life. Why should we accept only the teachings, yoga and the philosophy? If we accept that, why don't we accept also the other things? There was just one corner of my mind that would have liked to know where he was, that's all.

In January 1989, we went to Allahabad at the Kumbha Mela and met Sri Swamiji. That was magical. For four, five days at the Kumbha Mela, from 6 o'clock in the morning until 6 o'clock at night, Sri Swamiji was walking like anything, in the middle of millions of people, going here and there. We would eat somewhere on the road and he had clear and precise places to go to and people who he wanted to meet. I had to keep up with him and do video and photos at the same time. I was carrying 10 to 12 kilos of equipment.

We took bath at 3 o'clock in the morning on the specific day and that was amazing. We were about 6 or 7 people and Sri Swamiji said, "You guys go first. Leave everything here. Take your bath and come back." We dropped everything and just with one dhoti went off. There were millions of people, you couldn't see the river, the water, nothing. We went through the crowd, through these wet people coming out from the water,

and went into the cold water. We took three dips and I turned around to the shore to go back, but there was a wall of people, all wanting to take bath. I said, "Now where is Swamiji? How will we find him?" We worried that if we went in the wrong direction, we would never find him again. In the middle of all that, I heard his voice, "Come, let's go." We went straight there and he was waiting for us. He said, "Now I go." He went, together with Swami Niranjan and Swami Satsangi, and we stayed there with their clothes. They went, took bath and somehow they also came exactly to where we were waiting for them.

Every morning we would meet first at the Niranjani Akhara and have breakfast. All the talking was in Hindi and my only duty was to take photos and videos. After we had been at the Niranjani Akhara, we would visit other mahants or mahamandaleshwars or Naga babas. At one place I entered with my camera in hand and one sadhu came running at me with a sword. Swami Niranjan managed to stop his hand when the blade was just in front of my nose! At night we would visit different sadhus.

One day, after taking bath at 3 o'clock, we were walking back and it felt as if Sri Swamiji had finished. At some point, he turned and said, "Ah, Ananda! You stay here and at sunrise, take the video because tomorrow is the highest number of people coming for bath. Go up the tower, take the video and then you are free to go." I was left there in the middle of 30 million people with the cameras and all these things. ■

परिव्राजक प्रवर 4

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

मथुरा, गोकुल, वृन्दावन, बरसाना (1 से 11 जनवरी 1989)

मथुरा मण्डल की तीर्थ यात्रा के साथ वर्ष 1989 का आरंभ हुआ, जहाँ पर द्वापर युग में भगवान श्रीकृष्ण ने अवतार लिया एवं समस्त लीलाएँ कीं। भगवान श्रीकृष्ण ने वराह पुराण में स्वयं कहा है कि तीनों लोकों में ब्रज अथवा मथुरा से अधिक प्रिय अन्य कोई स्थान नहीं है।

न विद्यते च पाताले नान्तरिक्षे न मानुषे।
समत्वं मथुराया हि प्रियं मम वसुन्धरे ॥150.8॥
मथुरेति च विख्यातमस्ति क्षेत्रं परं मम।
सुरम्या च सुशस्ता च जन्मभूमि: प्रिया मम ॥150.11॥

यमुनोत्री से निकली, निर्मल नीले जल वाली उन्मुक्त यमुना इस नगर से होकर बहती है, जिसके किनारे बैठकर श्रीकृष्ण की राधा के साथ की गई उन लीलाओं की विरही स्मृति पर, जिन्हें प्रसिद्ध कवियों ने बारम्बार गाया है, मैंने गहन चिन्तन किया।

ब्रज की प्रत्येक वस्तु में कृष्ण-चेतना का आनन्ददायक स्मरण होता है, चाहे गोकुल का दर्शन हो, जो श्रीकृष्ण का पहला घर था, जहाँ वे माखनचोर कहलाये, या वृन्दावन, जहाँ उन्होंने कालियमर्दन किया, गोपियों के साथ रास-लीला की और रसिया कहलाये, या गोवर्धन पर्वत की परिक्रमा, जिसे ऊँगली पर उठाकर इन्द्र के कोप से स्वजनों की रक्षा की और इस प्रकार उन्हें गिरधर का नाम मिला, या बरसाने की यात्रा, जहाँ उनकी सर्वप्रिय गोपी राधा रहती थी।

श्रीकृष्ण की भूमि पर श्री अखण्डानन्द जी के आश्रम में मैंने बारह दिन व्यतीत किये और इस समय सम्पूर्ण भागवत की कथाएँ जीवन्त हो गयीं, जो हमेशा मुझे प्रेरणा देती रहेंगी। यहीं पर मुझे महान् सन्त देवराहा बाबा के दर्शन हुए।

कुम्भ मेला, प्रयाग (12 से 14 जनवरी तथा 2 से 7 फरवरी)

गंगा, यमुना और सरस्वती का संगम तथा इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना नाड़ी का प्रतीक, प्रयाग सर्वदा तीर्थराज रहा है। पद्मपुराण में इसके बारे में लिखा गया है –

ग्रहाणां च यथा सूर्यो नक्षत्राणां यथा शशी।
तीर्थानामुत्तमं तीर्थं प्रयागाख्यमनुत्तमम्॥ उत्तरखण्ड 24.4

जिस प्रकार ग्रहों में सूर्य तथा नक्षत्रों में चन्द्रमा प्रमुख है, उसी प्रकार तीर्थों में प्रयाग प्रमुख है। प्रत्येक बारह वर्षों के पश्चात् जब बृहस्पति वृष राशि तथा सूर्य मकर राशि में होता है, तब प्रयाग में पूर्ण कुम्भ मेले का आयोजन होता है। यह वर्ष विशेष रूप से शुभ था, क्योंकि 172 वर्षों के पश्चात् सोमवती अमावस्या आई थी।

14 जनवरी को मकर संक्रान्ति तथा 6 फरवरी को सोमवती अमावस्या के दिन मैंने स्नान पर्वों में भाग लिया। संगम के आवेशित जल ने मेरे सम्पूर्ण शरीर को विद्युन्मय कर दिया एवं मैंने सहज ही अनुभव किया कि यहाँ स्नान इसी जीवन में दिव्य जीवन प्रदान करता है।

इसी पुनीत अवसर पर गंगा, यमुना और सरस्वती के दर्शन के लिए मैंने स्वामी निरंजन को अपने पास बुला लिया। अन्य दिनों में हम लोग लाखों भक्तों के बीच, जो हमारी ही तरह वहाँ आये थे, घूमते रहे और उनके बीच होना अपने आप में एक हृदय-स्पर्शी अनुभव था। प्रत्येक संस्कृति, जाति एवं पंथ के असंख्य लोग अपने मस्तिष्क में एक ही विचार लेकर वहाँ आये थे – प्रयाग स्नान। उनके इस अटूट विश्वास के दृश्य को देखा और 'श्रद्धा एक ऐसी शक्ति है जो पर्वतों को भी हिला सकती है', इस विचार को मैं आसानी से समझ सका।

मैंने वहाँ एकत्र हुए अनेक साधु-संतों, तपस्वियों और त्यागियों, जैसे जूना अखाड़ा के महन्त गोदावरी, देवराहा बाबा, जगद्गुरु शंकराचार्य आदि के दर्शन किये। इसके कई दिनों बाद तक और अभी भी गंगा की रेत पर एकत्र अपार जन-समुदाय का एवं इस महान् दृश्य को देखने के लिए आकाश में एकत्र हुए सभी देवों, गंधर्वों एवं अप्सराओं का आँखें बन्द करके दर्शन कर सकता हूँ। ■

मोको कहाँ तू ढूँढे बन्दे

स्वामी गोरखनाथ सरस्वती

पूज्य गुरुदेव ने गंगा दर्शन से 8.8.88 को प्रस्थान किया था। कहाँ गये, किधर गये, किसी को मालूम नहीं था। करीब सालभर वे अज्ञातवास में रहे, सभी सिद्ध तीर्थस्थानों में देवी-देवताओं के पास गये। उन्होंने अपने गुरु, स्वामी शिवानंद जी के योग-प्रचार के आदेश की पूर्ति के लिए अपने इष्टदेव से आशीर्वाद लिया था और जब उनका योग-कार्य पूरा हो गया तो सभी देवी-देवताओं से आशीर्वाद लेकर आज्ञा माँगी कि अब आगे के जीवन के लिए क्या करना है।

प्रयाग में महाकुम्भ

उस समय मैं भी शिविर के बहाने आश्रम से निकल गया और करीब तीन-चार माह बाहर का कार्यक्रम बनाता रहा। सन् 1989 में प्रयाग में महाकुम्भ था। मेरे

मन में आया कि गुरुदेव कुम्भ मेले में अवश्य पहुँचेंगे। यह विश्वास इतना पक्का था कि मैं एक माह पहले से प्रयाग चला गया। वहाँ दो भाई-बहन थे जिन्होंने सन् 1980 में बिहार योग विद्यालय से योग शिक्षक प्रशिक्षण सत्र किया था। मेरे पास उनका पता था, वे झूँसी में एक मंदिर में रहते थे। भाई डॉक्टर थे, वहाँ वे दोनों योग का क्लास लेते थे। वहाँ कई कुटिया खाली थीं। पते के आधार पर गया और वहीं रुक गया। वहाँ से रोज सुबह कुम्भ मेले में निकल जाता था।

कुम्भ मेला 15-20 किलोमीटर के दायरे में पूरे शहर की तरह बसा था। वहाँ हर संन्यासी के अखाड़े में जाता और पूछता, 'हमारे गुरुजी, स्वामी सत्यानन्द जी यहाँ आये हैं क्या?' जूना अखाड़ा, निर्वाणी अखाड़ा, जितने भी अखाड़े थे, सब में जाता था। किसी अखाड़े में सुनने में आता कि 'आठ दिन पहले यहाँ आये थे,' किसी दूसरे अखाड़े में जाकर पूछता तो वे कहते थे, 'हाँ, तीन दिन पहले आये थे। लेकिन पता नहीं यहाँ से वे कहाँ चले गये।' अब मेरी व्याकुलता और बढ़ गई। इतना तो मालूम चल गया कि यहाँ हैं, पर अब दर्शन कैसे होगा, कहाँ मिलेंगे गुरुजी, बस दिनभर ढूँढते रहता था। एक महीने तक रोज सुबह निकलता, कहीं प्रसाद ले लेता और खोजते रहता। वहाँ संन्यासियों के लिए प्रसाद की कमी नहीं थी, हर अखाड़े में भण्डारा चलता था। भण्डारे में जाता, भोजन करता, फिर घूमता, किसी अखाड़े में जाता। कहीं राम लीला चल रही होती तो कहीं कृष्ण लीला। बड़ा आनन्ददायक था वह कुम्भ मेला। पता ही नहीं चला एक महीना कैसे बीत गया।

देवराहा बाबा के दर्शन

कुम्भ मेले में बड़ी-बड़ी संस्थाओं के शिविर लगे थे, संन्यासियों का सत्संग चलता, नागा बाबा घूमते रहते, और मैं दिनभर भटकता रहता था। ऐसा करते-करते एक दिन अचानक मैं देवराहा बाबा के पास चला गया। देखा एक सड़क पर बहुत लोग जा रहे हैं। उनके लिये तो विशेष सड़क बनायी जाती थी, उनकी सारी व्यवस्था पुलिस करती थी। वे मचान पर रहते थे हमेशा। मैंने सोचा, 'देवराहा बाबा का नाम सुना है, काफी सिद्ध महात्मा हैं, सब लोग उनका दर्शन करने जाते हैं, चलो हम भी दर्शन करेगें।' बाद में मुझे पता चला कि गुरुदेव भी उनके दर्शन के लिए गये थे।

देवराहा बाबा अपनी मचान से निकलते थे और अलग-अलग समूहों के लोगों को हाथ उठाकर आशीर्वाद देते थे। बीच-बीच में अन्दर जाते थे, फिर

थोड़ी देर बाद बाहर आते थे। एक समूह में करीब आठ-दस लोग होते थे। बाहर मैं भी खड़ा था। वे बाहर आये और इशारे से बुलाया। लाइन में सबसे आगे खड़ा व्यक्ति गया तो मना कर दिया। फिर इशारा किया। दूसरे व्यक्ति को लगा उसे बुला रहे हैं, पर फिर मना कर दिया। एक-एक करके कई गये और सारे लौटा दिये गये। सबको लगता था कि उनको ही बुला रहे हैं। उन्होंने दुबारा हाथ हिलाया तो मैंने सोचा कि मैं ही बचा हूँ। मैं थोड़ा आगे बढ़कर खड़ा हो गया। फिर उन्होंने हाथ से इशारा किया। मैं समझ गया, एक-दो व्यक्ति वहाँ खड़े थे, वे भी बोले, 'आपको ही बुला रहे हैं, जाइये।'

मैं उनके पास गया तो उन्होंने मुझे एक सेब दिया और कहा, 'इसको खाओ।' मैंने कहा, 'बाबाजी, मैं बाद में खा लूँगा।' वे बोले, 'नहीं, अभी खाओ। चबाओ और देखो कैसा है, स्वाद लो थोड़ा सा।' दाँत से काटा तो बहुत कड़वा निकला। करेला और नीम से भी कड़वा था। अब न खाते बना न उगलते बना। चूँकि प्रसाद था इसलिए किसी तरह से चबाया और निगल गया, पर पूरा मुँह कड़वा हो गया। उन्होंने पूछा, 'कैसा लगा?' मैं बोला, 'बाबाजी यह तो बहुत कड़वा है!' बोले, 'कोई बात नहीं। घुमाओ और दूसरी जगह को खाओ।' दूसरी जगह खाया तो अति खट्टा, इमली-नींबू से भी खट्टा! उसे भी निगला किसी तरह से। वे फिर बोले, 'थोड़ा और घुमाओ।' तीसरी जगह को काटा तो एकदम नमकीन लगा, जैसे नमक भर दिया हो। उन्होंने फिर पूछा तो मैं बोला, 'बाबाजी, यह तो पूरा नमकीन है।' वे बोले, 'कोई बात नहीं, खाओ-खाओ।' चौथे स्थान को घुमाया तो बहुत मीठा था। इतना मीठा कि लग रहा था कि अब इसको जल्दी खा लो, कहीं ऐसा न हो कि फिर घुमाने के लिए बोलें

और यह स्वाद निकल जाये। उनके पूछने पर मैंने कहा, 'हाँ बाबाजी, बहुत मीठा लगा। बहुत ही अच्छा स्वाद है।' वे बोले, 'ठीक है, बाद में खा लेना।'

इसके बाद उन्होंने मुझसे कहा, 'तुम सत्यानन्द के चेला हो न।' मैं बोला, 'जी हाँ, मैं यहाँ एक महीने से गुरुदेव को ढूँढ रहा हूँ, पर उनका दर्शन नहीं हो पा रहा है। कहाँ पर हैं, मालूम नहीं। कुछ लोग आपके दर्शन के लिए जा रहे थे तो मैं भी आ गया।' वे बोले, 'सब बात तो मैं पूछ ही नहीं रहा हूँ। अरे! सत्यानन्द इस युग के महान् अवतारी पुरुष हैं, सिद्ध महात्मा हैं, उनको लोग अन्दर से पहचानेंगे नहीं, लेकिन वे काम बहुत करेंगे। उनका नाम होगा, काम भी बहुत बढ़ेगा।' उनके श्रीमुख से ऐसा सुनकर मुझे बड़ा अच्छा लगा। फिर बोले, 'वे यहीं कुम्भ मेला में हैं। जाओ! दर्शन हो जायेगा।' बड़ी खुशी हुई, विश्वास भी हुआ कि गुरुजी का दर्शन अब हो जायेगा। बाबा को प्रणाम करके लौट आया।

गुरुदेव का दर्शन

मैंने फिर बचा हुआ सेब खाया जो कि पूरा मीठा था। वह नमकीन-कड़वा स्वाद कहाँ गया, मालूम नहीं। लोग मुझसे पूछने लगे, 'आपसे वे क्या कह रहे थे?' मैं बोला, 'भूल जाइये। वे सिद्ध महात्मा हैं, वे ही जानेंगे इन सब बातों को, मैं अपना दिमाग नहीं लगाता।' देवराहा बाबा का दर्शन करके लौट रहा था तो दूर से देखा कि गुरुजी, स्वामी निरंजन जी और स्वामी सत्संगी जी, तीनों कांकरी देवी की राम कथा में जा रहे थे। मैंने तीनों को दूर से देख लिया तो बहुत खुशी हुई, पर थोड़ा डर भी लगा। सोचा, 'गुरुजी कहीं देख लेंगे तो कहेंगे कि यहाँ कहाँ घूम रहा है।' खैर हिम्मत बाँधकर कथा स्थल पहुँच गया।

वहाँ कई लोग बैठे थे, कुछ लोग खड़े भी थे। शायद आयोजकों ने दस-पन्द्रह मिनट का निवेदन किया होगा तो गुरुजी चले गये होगें। काफी भीड़ थी, मैं भी पीछे खड़ा हो गया। बीच-बीच में गुरुजी को झाँककर देखता था, सामने जाने की हिम्मत नहीं हुई। मेरे सामने खड़े व्यक्ति कुछ देर बाद चले गये तो हम आमने-सामने हो गये। गुरुजी मंच पर बैठे थे, स्वामी निरंजन जी और स्वामी सत्संगी जी उनके बगल में थे। गुरुजी ने मुझे देख लिया। जब कथा समाप्त हो गई, सब चले गये तब अन्त में जाकर गुरुजी से मिला, प्रणाम किया। गुरुजी ने पूछा, 'यहाँ क्या कर रहा है?' मैं बोला, 'गुरुजी! मैं तो एक महीने से ऐसे ही घूम रहा हूँ आपके दर्शन के लिए।' उन्होंने पूछा, 'कहाँ रुके हो?' तो मैंने कहा, 'झूँसी मंदिर में।' बोले, 'चलो, देखकर आते हैं कहाँ रुके हो।'

हम लोग पैदल निकले। मंदिर वहाँ से कम-से-कम एक-दो किलोमीटर रहा होगा। गुरुजी पूछते जा रहे थे, 'कितना दूर है।' मैं बोलता, 'गुरुजी, अब आ ही गया है, बस थोड़ा ही दूर है।' फिर थोड़ा जाते तो बोलते, 'कहाँ थोड़ा दूर है!' कुछ पास गये तो मंदिर दिखा। मैं बोला, 'गुरुजी मंदिर दिख रहा है।' बहुत पुराना मंदिर था, वहीं एक कुटिया में मैं रहता था। गुरुजी थोड़ी देर रुके, फिर बोले, 'हाँ, बहुत अच्छा है। हम भी कभी यहाँ आकर कुछ दिन बितायेंगे।' जो भाई-बहन वहाँ रहते थे, वे भी मिले, गुरुजी से आशीर्वाद लिया, बड़े खुश हुए। हम भी खुश हो गये, चलो गुरुजी हमारी कुटिया तक आये।

कुछ देर बाद हम सब शिवानन्द आश्रम के पंडाल गये जहाँ गुरुजी के गुरु-भाई, स्वामी चिदानन्द जी रुके थे। उस दिन मध्यरात्रि के बाद संगम में स्नान का मुहूर्त्त था। हम लोग थोड़ी देर सोये, फिर स्नान के लिये निकले। कुछ समय बाकी था तो एक नागा संन्यासी के अखाड़े में गये। गुरुजी नागा साधु से कुछ देर बात करते रहे, फिर हम लोग संगम की ओर बढ़े। बारी-बारी से हम लोगों ने वहाँ डुबकी लगायी, बाहर निकले और तैयार हुए। फिर गुरुजी बोले, 'अब तुम लोग अपनी-अपनी जगह वापस जाओ, जहाँ से आये हो।' स्वामी निरंजन जी मुंगेर चले गये, स्वामी सत्संगी जी रिखिया चली गयीं और मैं झुलसी मंदिर चला गया। गुरुजी भी वहाँ से निकल गये। कहाँ से आये थे, कहाँ रुके थे, कहाँ निकले, कुछ मालूम नहीं, लेकिन इस पावन कुम्भ मेले में उनका दर्शन और सान्निध्य पाकर मुझे गुरुदेव के एक प्रिय भजन की पंक्तियाँ याद आ गयीं – *मोको कहाँ तू ढूँढे बन्दे, मैं तो तेरे पास में।* ■

Satsang Snippets of Sri Swamiji in Bombay

The sannyasin's purpose is the higher self. He works dedicated to his ashram or he roams.

* * *

Why were rivers stressed in myth and religion?

To mobilize man's faith. The Sanatana dharma has used useful things. The Ganga's source is at Mansarovar – Rakshastal. It has a subterranean flow, not in riverbeds, and emerges at Gomukh. So it has a little radioactivity in it which kills microbes. It is pure. The Gangetic valley from Haridwar onwards is the cradle of a great civilization, the rishi civilization. It is the original home of Aryans who did not come from outside. The *Rig Veda* talks of the Himalayas.

Yamuna is the sister of Yama Raj, the Lord of Death. She is a young girl, noisy. Her entire valley has many precipitous cliffs and is filled with songs. It is not easy for the intellect. Devotion springs from solitude which is possible here.

The Saraswati river is subterranean and this is why higher knowledge is associated with it.

* * *

Spiritual aspirants have certain sadhanas to perform. There is a period when they do not need to contact people. That is when the process of de-programming begins. The mind becomes vacant and revelations can come in form of commands or spiritual emotions, not in the language of sound but in silence. The frequency changes and becomes very high. You can pick up transcendental vibrations. Buddha had the revelation of compassion, Mahavir of ahimsa and Mohammed of one God, one humanity. They elevate the mind from *avidya*, ignorance. After this they came down and served humanity.

Avatars are not born out of good karmas but from God's *vibhuti*, power or might. They have control over karma.

Krishna was not 'born' but manifested – *prakatya*.
In the *Ramayana*, Rama is a superman.
In the *Ramacharitamanas*, he was the divine spark.
In the *Bhagavad Gita*, Krishna was aware of his divinity.

* * *

I had made a promise that when my work would be over I would leave, not because of vairagya. I have great faith in my Guru and in Swami Niranjan. Because he was very *badmash*, a naught boy, I taught him the human mind. The tamasic mind can be one-pointed or absorbed in the profane. Even when it is in sacred places, it is dissipated. Sensuality can be one-pointed, but leads to disturbances. Therefore, nature has created *rajoguna* and *sattwa guna* for three different types: *pashu*, animal, *veer*, warrior, and *devas* or *sadhus*, divine beings. It is important for one-pointedness to evolve in stages. There is no direct route – one must go through the three stages.

* * *

God will absorb all surplus emotions over and above the family in bhakti.

– 27 February 1989, Mumbai, India

A Chance Encounter

Swami Vyasananda Saraswati, Bhopal, MP

In 1989, I attended the Forestry Conference in Dehradun and on my return enquired about Swamiji at Sivanada Ashram Rishikesh. I was informed that he had left for Uttarkashi about an hour ago. I followed him and was lucky enough to receive his darshan there. We accompanied Swamiji the next day and took a dip at Gangotri. It was for the first time in my life. ■

From the desk of Swami Niranjan

March 1989

This year I had the honour of being twice in the august presence of Sri Swamiji during Kumbha Mela in Allahabad. First was on the Makar Sankranti day (14.1.1989). I reached Allahabad at 2 am on 13th January and was taken by Sri Swamiji himself on a guided tour of the Mela Nagar and the Sangam. On this day we also had darshan of many sadhus gathered there for the occasion. On 14th at 3 am, after a ratri jagaran, we had our first bath in the freezing cold waters of the Sangam which was limited to three dips only on a very freezing morning. Then by 7 am Sri Swamiji left Allahabad for destinations unknown accompanied for part of the way by Savita and Sanjiv Bhaskar from New Delhi, and I returned the same day to Munger.

The second visit, for which I had already taken permission from Swamiji, was on the occasion of Mauni Amavasya, and this time Swami Anandananda from Italy with video camera, Swami Vajrapani and Swami Ahimsamurti also had the opportunity of Swamiji's darshan. Some of the sadhus and swamis of whom we also had darshan were as follows:

- Mahamandaleshwar Sri Swami Vishwadevanandaji of Nirvani Akhada
- Sri Godawari Giri Maharaj, a great Naga saint of Juna Akhada which is the most ancient and foremost of the sannyasa traditions and carries the banner of Adiguru Sri Shankaracharya
- Pilot Baba
- Swami Santoshi Mata of Kankhal, Haridwar
- Maharaj of Udaseen Sampradaya Amarkantak
- Dr Brahmamitra Awasthi, a great research scholar from Keshawananda Yoga Sansthan, N. Delhi
- Sri Swami Chidanandji from the Divine Life Society, Rishikesh.

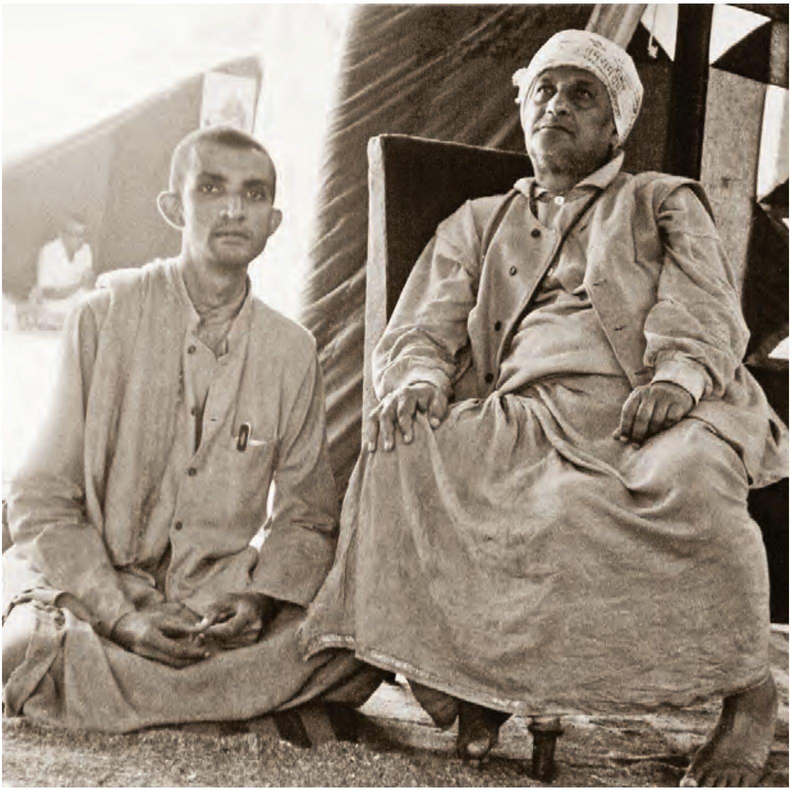

We visited many other camps of sadhus and yogis. The highlight of our visit was the darshan of Sri Devraha Baba at Kumbha. We were joined by Swamis Gorakhnath, Animesha, Gurudas, Hari Chaitanya and Avinashananda.

On the 6th at 1.30 am we all had our second bath at Sangam and in the milling crowd, we returned to our place of stay. Afterwards I left Sri Swamiji to return to Munger accompanied by Swamis Anandananda and Ahimsamurti.

The visits at Kumbha Mela have left an everlasting and wondrous impression in our minds as we experienced faith, not as a concept, but as a living reality. The sea of humanity in which we got separated from Swamiji, then by his miracle met him again, to lose him a second time and then re-meet him, was another mind-blowing event and a different story. ■

स्वामी निरंजनानन्द की कलम से

मार्च 1989

इस वर्ष मुझे इलाहाबाद के कुम्भ मेले में दो बार श्री स्वामीजी के सान्निध्य में रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। प्रथम अवसर 14 जनवरी 1989, मकर संक्रांति का था। 13 जनवरी को सुबह स्वयं श्री स्वामीजी ने कुम्भ नगर घुमाया और हम लोगों ने संगम के दर्शन किये। साथ ही इस पावन अवसर पर एकत्र हुए अनेक साधु-महात्माओं के भी दर्शन किये। 14 जनवरी को रात्रि-जागरण के पश्चात् प्रात: तीन बजे संगम के बर्फ जैसे शीतल जल में प्रथम स्नान किया। इसके पश्चात् श्री स्वामीजी इलाहाबाद से अज्ञात गन्तव्यों की यात्रा हेतु निकल पड़े।

श्री स्वामीजी से भेंट का द्वितीय अवसर मौनी अमावस्या का पावन दिन था, जिसके लिए मैंने उनसे पहले से ही अनुमति ले ली थी। कुम्भ मेले में जिन साधु-महात्माओं और मनीषियों के दर्शन हुए, उनमें से कुछ का परिचय इस प्रकार है – निर्वाणी अखाड़े के महामण्डलेश्वर श्री स्वामी विश्वदेवानन्द जी; जूना अखाड़े के महान् नागा साधु श्री गोदावरी गिरि जी; पायलट बाबा; कनखल, हरिद्वार की स्वामी संतोषी माता जी; उदासीन सम्प्रदाय अमरकंटक के महाराज जी; दिव्य जीवन संघ, ऋषिकेश के अध्यक्ष, स्वामी चिदानन्द जी तथा केशवानन्द योग संस्थान के प्रमुख शोधकर्त्ता, डॉ. ब्रह्ममित्र अवस्थी। हम अन्य कई साधु-संतों और योगियों के शिविरों में भी गये। हमारी कुम्भ यात्रा का मुख्य आकर्षण था – देवराहा बाबा के दर्शन।

6 फरवरी को सबेरे डेढ बजे हम सबने दूसरी बार संगम में स्नान किया और उसके बाद अपने स्थान वापस लौट आये। कुम्भ यात्रा के अनुभवों ने हमारे मन पर अमिट चिह्न अंकित कर दिये हैं, क्योंकि वहाँ हमने श्रद्धा एवं विश्वास का सैद्धान्तिक रूप में ही नहीं, बल्कि जीवन्त रूप में अनुभव किया। उस अथाह मानव सागर में श्री स्वामीजी से बिछुड़ जाना, फिर उनकी कृपा से मिलना, फिर दुबारा अलग हो जाना और अन्तत: पुन: मिल जाना एक अविश्वसनीय, चमत्कारी घटना थी जिसने गुरु और ईश्वर में हमारी श्रद्धा सम्पुष्ट कर दी। ■

From the desk of Swami Niranjan

June 1989

On the occasion of the Silver Jubilee of BSY, this year the Guru Poornima holds a special importance. We are celebrating this poornima as Shishya Poornima. It is the time when the shishyas must open to the spark of awareness which leads them to the guru's flame inside.

Receiving diksha is just the first stage of spiritual life. Afterwards the inner link between the guru and disciple must be strengthened and tempered. Then as our knowledge and understanding grow, we must also prepare ourselves to become the vessels and transmitters of the light. Otherwise, how can the guru's blessings and grace reach the multitudes of unenlightened people?

Spiritual life must be progressive, not static. But neither a. man nor a disciple can progress without, so to speak, being thrown into the deep end and forced to swim under the watchful eyes of the trainer. If guru would allow us to cling and depend upon him lifelong, as so many have done, we would all remain spiritual dwarfs.

We have to begin to grow in our own right and the opportunity has been provided to us by Poojya Swamiji in order to assess our own strength and limitations, realizing full well that his guiding spirit is beside us at all times.

This Shishya Poornima is a time when we recommit ourselves to the discovery of the guru within us and gain strength to apply his teachings, not just listen to them. As we move from one stage of life into another, the presence and concept of guru grows within us. ■

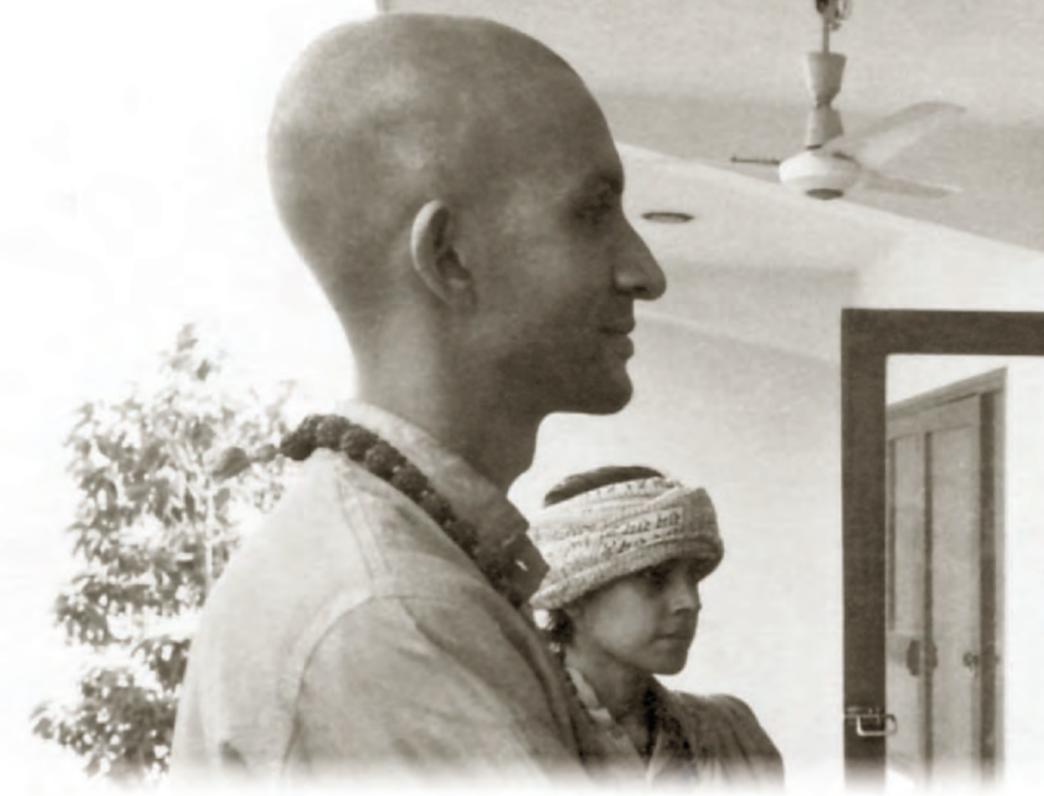

स्वामी निरंजनानन्द की कलम से

जून 1989

बिहार योग विद्यालय की रजत जयन्ती के अवसर पर आयोजित इस वर्ष की गुरु पूर्णिमा विशेष महत्त्व रखती है। हम इस पूर्णिमा को शिष्य पूर्णिमा के रूप में मना रहे हैं। यह एक ऐसा समय है जब शिष्यों को चेतना की उस चिंगारी को ग्रहण करना होगा जो उन्हें भीतर विद्यमान गुरु की ज्योति की ओर ले जा सके।

दीक्षा ग्रहण करना आध्यात्मिक जीवन का मात्र प्रथम चरण है। इसके बाद गुरु और शिष्य के आन्तरिक सम्बन्ध को दृढ़ तथा मजबूत बनाना पड़ता है। फिर जैसे-जैसे हमारा ज्ञान और अनुभव बढ़ता है, हमें गुरु के प्रकाश का संवाहक और वितरक बनने के लिए तैयार होना पड़ता है। अन्यथा, गुरु का आशीर्वाद और अनुग्रह हजारों-लाखों अज्ञानी मनुष्यों तक कैसे पहुँच पाएगा?

आध्यात्मिक जीवन स्थायी नहीं रहना चाहिए, इसका क्रमिक विकास होना चाहिए। लेकिन किसी मनुष्य या शिष्य का वास्तविक विकास तब तक

नहीं हो सकता जब तक उसे एक तरह से गहरे पानी में फेंक न दिया जाए और वह अपने शिक्षक या गुरु की पैनी निगरानी में तैरने के लिए मजबूर न हो जाए। यदि गुरु जीवनभर हमें उनसे चिपके रहने और उन पर निर्भर बने रहने दें, जैसा अनेकों ने आज तक किया है, तो हम सब आध्यात्मिक दृष्टि से बौने ही रह जाएँगे।

हमें विकास और उत्थान के मार्ग पर आगे बढ़ना है। पूज्य स्वामीजी ने हमें विकास का एक अवसर प्रदान किया है ताकि हम अपने सामर्थ्यों और कमजोरियों को पहचान सकें, और साथ ही यह जान सकें कि उनका मार्गदर्शन और प्रेरणा सदा हमारे साथ है।

शिष्य पूर्णिमा एक ऐसा समय है जब हम स्वयं को अपने भीतर के गुरु तत्त्व के अन्वेषण हेतु पुन: समर्पित करें तथा उस गुरु तत्त्व की शिक्षाओं को अपने जीवन में उतारने की शक्ति प्राप्त करें। हम जीवन के एक चरण से दूसरे चरण में जैसे-जैसे प्रवेश करते हैं, हमारे भीतर गुरु की उपस्थिति एवं अनुभूति बढ़ती जाती है। ■

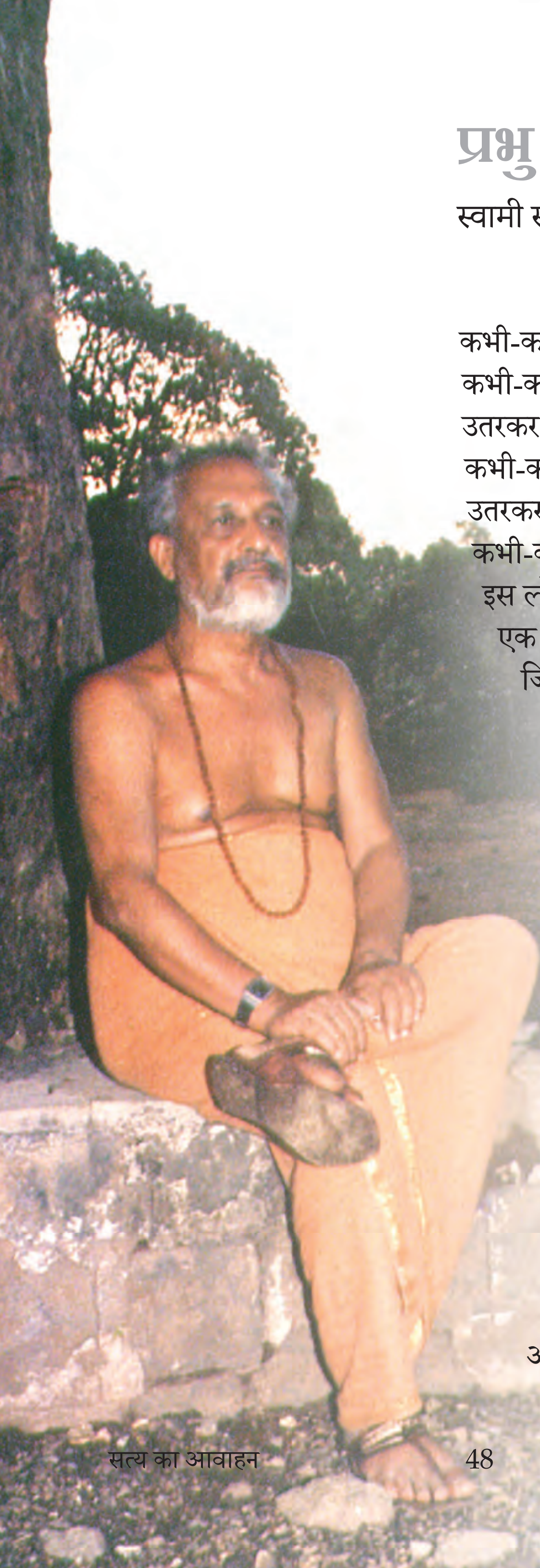

प्रभु का अवतरण

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

कभी-कभी वे झाँकी दिखाकर चले जाते हैं।
कभी-कभी वे ज्योतिर्लोक तक
उतरकर चले जाते हैं।
कभी-कभी सूक्ष्म लोक तक
उतरकर चले जाते हैं।
कभी-कभी भूलोक में भी उतरते हैं।
इस लोक और उस लोक के बीच
एक दिवाल है,
जिसमें एक अतिसूक्ष्म छिद्र है।
उसी मार्ग से वे उतरते हैं
और वे बिल्कुल प्रत्यक्ष दिखते हैं।
परन्तु उनके आने के पूर्व
सतोगुण का उदय होता है,
शांति जागती है,
प्रभावों का अभाव हो जाता है।
देवतागण आकर,
अन्त:करण को पवित्र
और भक्तिमय बनाकर
चले जाते हैं।
अन्त में गुरु के आगमन
के साथ-ही-साथ
प्रभु का साक्षात् अवतरण होता है।
बन्द आँखों वाले देखते हैं
पर खुली आँखों वालों के आगे
अंधियारा छा जाता है।

Yoga Publications Trust

Satyam Tales

सत्यम् गाथाएँ

Satyam Tales depict the life and teachings of our beloved guru, Sri Swami Satyananda Saraswati. Through the medium of these simple narratives, we hear the voice of Sri Swamiji inspiring one and all. The stories are a delightful read for children, adults and old alike, conveying an invaluable message for those engaged in the world and for those seeking the spirit. These tales will touch your heart and give you joy, hope, conviction and, above all, faith.

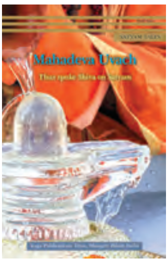

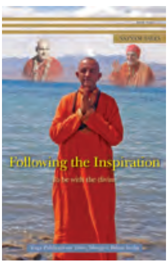

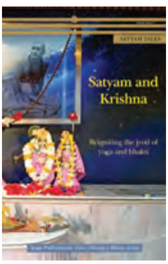

For an order form and comprehensive publications price list, please contact:

Yoga Publications Trust, PO Ganga Darshan, Fort, Munger, Bihar 811 201, India.

Tel: +91-09162 783904, 06344-222430, 06344-228603

A self-addressed, stamped envelope must be sent along with enquiries to ensure a response to your request.

हरि ॐ

सत्य का आवाहन एक द्वैभाषिक, द्वैमासिक पत्रिका है जिसका सम्पादन, मुद्रण और प्रकाशन श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के संन्यासी शिष्यों द्वारा स्वास्थ्य लाभ, आनन्द और प्रकाश प्राप्ति के इच्छुक व्यक्तियों के लिए किया जा रहा है। इसमें श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती, श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती, स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती एवं स्वामी सत्यसंगानन्द सरस्वती की शिक्षाओं के अतिरिक्त संन्यास पीठ के कार्यक्रमों की जानकारियाँ भी प्रकाशित की जाती हैं।

सम्पादक – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती
सह-सम्पादक – स्वामी शिवध्यानम् सरस्वती

संन्यास पीठ, द्वारा-गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर 811201, बिहार, द्वारा प्रकाशित।

थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, हरियाणा में मुद्रित।

© Sannyasa Peeth 2022

पत्रिका की सदस्यता एक वर्ष के लिए पंजीकृत की जाती है। देर से सदस्यता ग्रहण करने पर भी उस वर्ष के जनवरी से दिसम्बर तक के सभी अंक भेजे जाते हैं। कृपया आवेदन अथवा अन्य पत्राचार निम्नलिखित पते पर करें –

संन्यास पीठ
पादुका दर्शन,
पी.ओ. गंगा दर्शन,
फोर्ट, मुंगेर, 811201,
बिहार, भारत

अन्य किसी जानकारी हेतु स्वयं का पता लिखा और डाक टिकट लगा हुआ लिफाफा भेजें, जिसके बिना उत्तर नहीं दिया जायेगा।

कवर एवं अन्दर के रंगीन फोटो : श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती का परिव्राजन, 1988–1989

• Registered with the Registrar of Newspapers, India
Under No. BIHBIL/2012/44688

Important Notice for all Subscribers

Blessed Self
Jai Ho

We are happy to inform you that since January 2021, the *AVAHAN* magazine is available FREE of COST to all subscribers, supporters, aspirants, devotees and spiritual seekers at –

www.sannyasapeeth.net

Due to the ongoing coronavirus pandemic and uncertainties associated with it, the printed copies of the *AVAHAN* magazine will not be available in 2022 for circulation to subscribers. Therefore, NO new or renewal of previous subscription is being accepted for this magazine for 2022, so please do NOT send any membership for the magazine.

You will be notified from time to time regarding the magazine and any new developments.

In the meantime, continue to imbibe the message of sannyasa and to live the teachings of Sri Swami Sivananda Saraswati and Sri Swami Satyananda Saraswati to improve and better the quality of your life.

With prayers and blessings of Sri Swami Satyananda Saraswati for your health, wellbeing and peace.

Om Tat Sat
The Editor